आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की समालोचना में संस्कृति और मानवीय मूल्य

डॉ0 विवेक सिंह,
प्रवक्ता–हिन्दी,
डायट,भदोही,
उ.प्र

जब तक व्यक्ति अत्यन्त ख्यात नहीं हो जाता, तब तक समाज को पता ही नही चलता है कि कोई ऐसा भी व्यक्ति है, जो वर्षो से आरात्रिक सामाजिक, सुख–दुःख से प्रताड़ित निरन्तर सृजन करता चला आ रहा है। महान् सृजनकर्ता जिनमें अंतःप्रेरणा भी प्रचुर मात्रा में होती है, वे अपने समय के गहनतम सुख–दुख और अन्तर्विरोध के प्रति प्रतिक्रिया नही करता, क्योंकि उदात्त व्यक्तित्व की निर्मित के पीछे यह प्राथमिक आवश्यक शर्त रही है कि उसका व्यक्तित्व 'स्व' के लिए नही बल्कि 'पर' के लिए है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में पण्डित हजारी प्रसाद द्विवेदी ऐसे ही व्यक्तित्व के रूप में अवतरित हुए। आचार्य द्विवेदी का उल्लेख केवल हिन्दी साहित्य के संदर्भ में न होकर धर्म, संस्कृति, साहित्य, इतिहास और परम्परा के व्याख्याता के रूप में होता है। इनका साहित्य सृजन व्यापक एवं बहुआयामी है। विषय और भाषा दोनो दृष्टियों से।

"साहित्य जीवन की सर्वश्रेष्ठ एवं सम्पूर्ण अभिव्यक्ति है" द्विवेद जी कसौटी पर कसे, खरे साहित्य के जीवन्त आदर्श थे। इनकी रचनायें जीवन के विभिन्न पक्षों की श्रेष्ठ एवं सहज स्वाभाविक अभिव्यक्तियाँ है। इन्होंने ज्योतिष और गणित – जैसे शुष्क विषय को उपन्यास का कलेवर, समीक्षा को साहित्य की शास्त्रीय सांस्कृतिक प्रतिबद्धता के साथ सरलता साहित्योतिहास को नव आलोक, धर्म कला संस्कृति को प्रेरक, अन्वेषी, अभिव्यक्त एवं शोध परक, निर्भीक न्याय दृष्टि प्रदान की। द्विवेदी जी का समीक्षा सर्जनात्मक है। उनकी समीक्षा–दृष्टि में एक व्यापक उदारता और लचीलापन है, जिसके कारण वे सभी प्रकार के साहित्यों का आस्वाद ले सकते है। चाहे वह रसवादी काव्य हो, चाहे द्वन्द्व–उद्वेलित नवीन साहित्य हो। वे परम्परा, युग और समाज–सर्जक का व्यक्तित्व प्रभृति सभी बातों को ध्यान में रखकर प्रत्येक युग के और हर तरह के साहित्य का मूल्यांकन कर लेते है।

आचार्य द्विवेदी की समीक्षा दृष्टि साहित्य को स्वतंत्र मानकर नही चलती अपितु उसे संस्कृति की जीवनधारा का शाश्वत प्रवाह मानती है। उन्होंने भारतीय संस्कृति की समन्वय भावना में जातियों, धर्मो, सम्प्रदायों, आस्थाओं और विश्वासों के विलीनीकरण तथा उसे अधिकाधिक पुष्ट करने की भावना की ओर संकेत किया है। "कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ने इस भारतवर्ष को महामानवों समुद्र कहा है। विचित्र देश है। यह! ससुर आये, आर्य आये, शक आये, हूण आये, यक्ष आये, गंधर्व आये – न जाने कितनी मानव जातियाँ यहाँ आयी और आज के भारतवर्ष के बनाने में हाथ लगा गई।"

द्विवेदी जी ने गुरूदेव रवीन्द्रनाथ के कथन द्वारा भारतीय संस्कृति के प्रति अपने महत्व को मुखरित किया है – "सचमुच हमारा भारत महामानवों का महासागर है – हिन्दू, मुसलमान, क्रिश्चियन सभी आओ। इस पुण्यमय भारत तीर्थ में स्नान करो। भारतीय संस्कृति सर्व

समावेशिका रही है। उसने, कभी किसी धर्म विशेष, पंथ विशेष, राष्ट्र विशेष की बात नही कही, उसने समस्त भूमण्डल को अपना परिवार माना। सबके कल्याण की कामना की। इसी कारण यूनानी, पारसीक, शक, हूण सभी इस इस विशाल सांस्कृतिक चेतना में समायोजित होते गये। आचार्य द्विवेदी अपने 'कबीर' समीक्षा ग्रंथ में कहते है कि "भारतीय संस्कृति की कुछ ऐसी विशेषता रही कि उन कबीलों, नस्लों और जातियों की भीतरी समाज व्यवस्था और धर्म मत में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नही किया गया। इसी कारण भारतीय संस्कृति इतने अतिथियों को अपना सकी। आधुनिक राष्ट्रीय नवजागरण के पश्चात् अपनी सांस्कृतिक परम्परा के मूल्यांकन का एक नया दौर दिखाई पड़ता है, जिसमें भाषा, साहित्य, संस्कृति और इतिहास सम्बन्धी नाना प्रश्न विचारणीय थे। यही कारण है कि स्वतंत्रता के पश्चात् सांस्कृतिक विरासत का सवाल अहम सवाल बन गया था। संस्कृति का सवाल हमारी भाषा और साहित्य से जुड़ा सवाल है। इतने अन्तर्विरोधों के बीच सांस्कृतिक परम्परा का मूल्यांकन उनकी समूची साहित्य साधना की केन्द्रवर्ती प्राणधारा है और इतिहास मनुष्य की जययात्राा की विकास गाथा। तद्युगीन परिवेश और विपरीत परिस्थितियों में युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप द्विवेदी जी ने हिन्दी की सांस्कृतिक समीक्षा को एक अत्यन्त उदात्त नैतिक भूमि पर प्रतिष्ठित किया है। इनकी मानवतावादी समीक्षा भारतीय संस्कृति के संरक्षक साहित्य का निर्माण कराने की प्रेरणास्वरूप है।

मानवीय सार्थकता एवं अस्मिता की अभिव्यक्ति का मूलाधार साहित्य ही है, जो मानव–मंगल की कामना से मण्डित है। "सहितस्यभाव साहित्यम्" का तातपर्य यही है कि साहित्य वह है जो लोक–मंगल की भावना से ओत–प्रोत हो। अतएव साहित्य की प्रासंगिकता शाश्वत एवं सर्वकालिक होती है, इसीलिए द्विवेदी जी की दृष्टि में मनुष्य की सर्वोत्तम कृति साहित्य है, वह मानव की सबसे सूक्ष्म एवं गहनीय साधना का प्रकाश है। 'एकत्व की अनुभूति' को ही वे मानव की चरम मानवता मानते है। उनके सभी समीक्षा सम्बन्धी सिद्धान्त मानवता की पृष्ठभूमि पर ही जन्मते तथा पल्लवित होते है।

साहित्य–भाव, संवेदना एवं प्रेरणा की संसृष्ट्रि या उपज है। यदि वह संवदना न उत्पन्न कर सके तो व्यर्थ का प्रयास होगा। साहित्यकार का दायित्व बताते हुए उन्होंने लिखा है कि "साहित्य (ललित साहित्य) केवल भोगविलास का साधन नही होना चाहिए, उसे मनुष्यता का उन्नायक होना चाहिए।

द्विवेदी जी प्रधानतः मानवता के पुजारी थे। इसीलिए कबीर उनके आदर्श के अधिक निकट थे। कबीर के विषय में उन्होंने लिखा – **"कबीर मस्तमौला थे जो कुछ कहते थे, साफ कहते थे। जब मौज में आकर रूपक और अन्योक्ति पर उतर आते थे, तब जो कहते थे, वह सनातन कवित्व का श्रृंगार होता था। सूर के विषय में उन्होंने कहा है"** प्रेम के इस साफ और मर्जित रूप का चित्रण भारतीय साहित्य में किसी और कवि न नही किया है, यह सूरदास की अपनी विशेषता है उनका यह विश्वास था कि मनुष्य मात्र को एक सूत्र में जोड़ने के लिए जो वस्तु परम आवश्यक है, वह है प्रेम। यही कारण है कि भक्ति–साहित्य में कृष्ण तथा गोपियों के प्रेम–भाव ने द्विवेदी जी को आकर्षित एवं प्रभावित किया और उन्होंने सूर साहित्य पर अपनी लेखनी चलायी। इस प्रकार कबीर के बाद दूसरे आदर्श सूरदास थे। यहां पर एक बात लक्ष्य करने योग्य है कि द्विवेदी जी ने तुलसीदास पर कोई स्वतंत्र पुस्तक नही लिखी तथापि 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में द्विवेदी जी लिखते है – "तुलसी का सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, ग्राहस्थ और वैराग्य का समन्वय, व्यक्ति और ज्ञान का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, ब्राह्मण और चाण्डाल

का समन्वय रामचरित मानस शुरू से आखिर तक समन्वय का काव्य है।" स्वयं द्विवेदी जी समन्वयकारी साहित्यकार थे। उनका साहित्य प्राचीन एवं नवीन को जोड़ने वाली कड़ी है।

इक्कीसवीं सदी क देहरी पर कदम रखते ही पाश्चात्य "अप संस्कृति एवं आधुनिकता की कोख से उपजी विसंगतियों ने मानव को अकेला, असहाय, स्वार्थी और लोभी बनाकर उसकी संवेदना शक्ति ही छीन लिया। आज हर जगह अविश्वास का वातावरण फैल रहा है – मनी पॉवर, मसल पॉवर, माफिया पॉवर, मीडिया पॉवर ही 'पावर फूल' है। शक्तिशाली हैं। इन विपरीत परिस्थितियों में युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप मानवीय संवेदनायें तलाशना बांध तोड़कर बह रहे जल सैलाब के विरूद्ध नाव ले जाने जैसा है, परन्तु यदि बाढ़ की इस विभीषिका से भाषा, साहित्य एवं राष्ट्र को बचाना है, तो नौका को सहारा देना ही पड़ेगा। आचार्य द्विवेद पश्चिम का प्रभाव ग्रहण करना, किसी प्रकार 'लज्जा की बात' नही मानते क्योंकि साहित्य आत्मा का साम्यवाद है जैसे पृथ्वी के भीतर एक ही रसस्रोत प्रवाहित हो रहा है, हर वृक्ष–आम, कटहल, नीम, बबूल आदि उसी से अपना जीवन–रस ग्रहण करते है। सारा पार्थक्य ऊपरी है, भीतर सब एकाकार है। ऐसे ही सभी साहित्य पाश्चात्य हो, या प्राच्य – परस्पर संश्लिष्ट है, आपस में मिले हुए है। यूरोपीय जीवन दृष्टि से प्रभावित होना न अपमान की बात है और न अस्पृश्यता की, क्योंकि आज हम साहित्य की जिस ढंग से चर्चा करते है, वह पुराने भारतीय ढंग के अनुरूप न होकर यूरोप के आधुनिक ढंग से अनुरूप है। प्रभाव तो मनुष्य पर तब तक पड़ेगा जब तक उसमें जीवन है। परन्तु अंधानुकरण मानसिक दरिद्रता एवं गुलामी का परिचायक है। उनकी धारणा है कि "इन दो चरम अंतो से बचने का प्रयत्न होना चाहिए। " वस्तुतः उनकी समीक्षा इन दो चरम अंतों की मध्यमवर्तिनी होकर ही निर्बाध रूप से गतिमान है।

आज मनुष्य अत्यन्त मोटे प्रयोजनों की पूर्ति चाहता है, जो उसकी आहार, निद्रा पशु–सामान्य श्रधाओं के निवर्त्तक है, इसके बाद भी उसका मनुष्य बनना बाकी रह जाता है। आचार्य द्विवेदी का साहित्य यही काम करता है जो साहित्य मनुष्य को उसके पशु–सुलभ सतह से ऊपर नही उठाता वह साहित्य की संबा ही खो देता है, क्योंकि हमारा परम लक्ष्य मनुष्यत्व है। मध्ययुग में जिस वस्तु को अध्यात्म कहा करते थे, वही वस्तुतः इस युग का मनुष्यत्व है। इस प्रकार निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि आचार्य द्विवेदी की मानवता की पृष्ठभूमि पर चिन्हित समीक्षा सिद्धान्त वर्तमान परिवेश में राष्ट्र व समाज की विसंगतियों को दूर करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध होते है। द्विवेदी जी ने, यर्थाथतः मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की है, जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा की है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कबीर – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी।
2. हिन्दी साहित्य की भूमिका – आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. अशोक के फूल – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. साहित्य के मर्म – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
5. हिन्दी आलोचना – विश्वनाथ त्रिपाठी
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी – विश्वनाथ प्रसाद तिवारी।
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी का साहित्य – डॉ0 चौथीराम यादव
8. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी विशेषांक – हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

9. नरेश मेहता के साहित्य में सांस्कृतिक बोध– डॉ0 मार्तण्ड सिंह

10. भारतीय संस्कृति के मूल स्वर – डॉ0 गोविन्दचन्द्र पाण्डेय।

11. मानवमूल्य और साहित्य – डॉ0 धर्मवीर भारती।

Copyright © 2017 *Dr. Vivek Singh*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.